शीघ्र कार्यवाही: एक मौलिक अधिकार

स्पीडी ट्रायल या शीघ्र सुनवाई

- इसका तात्पर्य किसी अभियुक्त के खिलाफ लगाए गए आरोपों के शीघ्र समय पर जांच, गवाही आदि को पेश कर उसके मुकदमे के शीघ्र सुनवाई से है।
- दरअसल 'न्याय' का तात्पर्य दोषी/अभियुक्त की दोषसिद्धि या निर्देश साबित कर रिहाई दे देने तक ही सीमित नहीं है, बल्कि 'न्याय' में त्वरित और निष्पक्ष कार्यवाही भी शामिल है।
- वास्तविकता यह है कि पूरे देश के जेल में कई ऐसे कैदी हैं, जिन्होंने अपने जुर्म (अगर साबित हो जाता) के दंड में पाए जाने वाले सजा से ज्यादा वक्त जेल में बिता चुके हैं।
- शीघ्र कार्यवाही बुनियादी मानवाधिकारों में शामिल है और न्यायालय स्वयं यह मानती है कि 'न्याय में देरी होना, न्याय से वंचित करने के समान है।'

स्पीडी ट्रायल की अवधारणा की शुरुआत -

- स्पीडी ट्रायल के अवधारणा की शुरुआत वर्ष 1977 में बिहार में नियुक्त किए अधिकारी आरिफ रुस्तम की रिपोर्ट से हुई।
- अपने कार्यकाल के दौरान आरिफ रुस्तम ने बिहार के कई सारे जेलों का निरीक्षण किया, जिसमें उन्होंने पाया की जेल में कई ऐसे कैदी हैं जो सजा दिए जाने की स्थिति में मिलने वाले कारावास से ज्यादा समय से कैद में है।
- उन्होंने पाया कि कई सारे कैदी ऐसे हैं, जो अंडर ट्रायल है अर्थात जिनके केस की प्रक्रिया आरंभ भी नहीं हुई है।

Result Mitra

हुसैनारा खातून vs बिहार (गृह सचिव) -

- आरिफ रुस्तम के निरीक्षण की रिपोर्ट जब एक न्यूज़पेपर में प्रकाशित हुई तब दिल्ली उच्च न्यायालय के एक अधिवक्ता कपिल हिंगोरानी ने सर्वोच्च न्यायालय में एक याचिका दायर किया, जो बंदी प्रत्यक्षीकरण से संबंधित था।
- याचिकाकर्ताओं हुसैनारा खातून ने अनुच्छेद-32 (संवैधानिक अधिकारों का उपचार) के तहत यह याचिका दायर की।
- याचिका की सुनवाई तत्कालीन भारत के मुख्य न्यायाधीश पी एन भगवती की बेंच ने किया, जिसका निर्णय 9 मार्च 1979 को दिया गया।

सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय -

- सर्वोच्च न्यायालय ने इस मामले में निम्न आदेश दिए:-
- अंडर ट्रायल कैदियों की रिहाई जल्द सुनिश्चित हो।
- अनुचित सजा से निर्दोषों की रक्षा होनी चाहिए।
- दोषी साबित होने की दशा में अधिकतम दंड से ज्यादा दंड/कारावास झेलना अनुच्छेद-21 का उल्लंघन है।
- सरकार जमानत के आवेदन के लिए अभियुक्त/दोषी की तरफ से अपनी लागत पर वकील की नियुक्ति करे।
- न्यायालय एवं प्रशासन को लंबित मामले की स्थिति में कारण स्पष्ट करना चाहिए।

IPC एवं Cr. Pc में शीघ्र कार्रवाई के लिए प्रावधान -

- IPC की धारा 157 (1) के अनुसार, अपराध-स्थल पर पुलिस को पहुंचकर जल्द से जल्द जांच की कार्रवाई करनी चाहिए।
- धारा 167 (2) (a) कहता है कि किसी अभियुक्त को पुलिस की हिरासत में 60-90 दिनों से ज्यादा नहीं रखा जा सकता।
- धारा 173 (1) कहता है कि बिना देरी के पूर्ण जांच प्रक्रिया संपन्न करना पुलिस का कर्तव्य है।
- धारा 173 1 (a) कहता है अगर किसी नाबालिक बच्चे का बलात्कार हुआ है तो अपराध के दिन से 2 महीने के भीतर जांच प्रक्रिया पूर्ण होनी चाहिए।
- धारा 376 से संबंधित अपराधों में 2 महीने के भीतर जांच प्रक्रिया पूर्ण हो जानी चाहिए।

Result Mitra

- धारा 468 कहता है की नियत अवधि के भीतर (1 वर्ष - 3 वर्ष) न्यायालय को मामले का संज्ञान लेना चाहिए, अन्यथा अभियुक्त रिहा हो जाएगा।
- धारा 428 कहता है कि अगर किसी अपराधी को आजीवन कारावास मिलता है तो दोषी करार दिए जाने से पूर्व कारावास में बिताया गया समय आजीवन कैद में घटा दिया जाना चाहिए।
- धारा 57 कहता है कि हिरासत में लिए गए व्यक्ति को 24 घंटे के अंदर नजदीकी मजिस्ट्रेट के समक्ष पुलिस द्वारा लाया जाना चाहिए, अन्यथा हिरासत अवैध और गैरकानूनी हो सकता है।

Note: 1 July 2024 से IPC एवं Cr.Pc को क्रमशः भारतीय न्याय संहिता एवं भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता से प्रतिस्थापित कर दिया गया है।

Note: कोई भी कानून किसी सुनवाई की समाप्ति के लिए किसी समय-सीमा का निर्धारण नहीं करता है और अगर किसी मामले में ऐसा है तो वह एक निर्देश की भांति है न कि कानूनी रूप से अनिवार्य।

शीघ्र कार्रवाई और संविधान -

- सुप्रीम कोर्ट के अनुसार अनुच्छेद-21 में शीघ्र कार्रवाई का सिद्धांत निहित है।
- अनुच्छेद 21 कहता है कि भारतीय कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के सिवाय किसी भी व्यक्ति को जीवन एवं व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित नहीं किया जा सकता।
- मुन्न vs इलिनोइस मामले में SC ने कहा कि जीवन का तात्पर्य केवल ज़िन्दगी या जिन्दा रहने के अर्थों तक ही सीमित नहीं है, बल्कि यह व्यापक एवं विस्तृत है।
- व्यक्ति तब तक दोषी नहीं होता, जब तक कि उसका दोष सिद्ध न हो जाए, ऐसे में अनावश्यक कारावास, जमानत के लिए आर्थिक एवं मानसिक परेशानी अनुच्छेद 21 का उल्लंघन माना जाएगा।
- मेनका गाँधी vs भारत संघ (1978) मामले में SC ने कहा था कि अनुच्छेद 21 से वंचित किये जाने के लिए दो आधार अनिवार्यतः होने चाहिए:-
- एक कानून एवं
- निष्पक्ष, उचित एवं न्यायपूर्ण कानूनी प्रक्रिया।
- राज्य के नीति निदेशक तत्व (DPSP) में भी शीघ्र कार्रवाई के लिए प्रावधान है।
- अनुच्छेद 38 कहता है कि राज्य जन-कल्याण के लिए उचित सामाजिक व्यवस्था को बढ़ावा देगा।
- अनुच्छेद 39 में राज्यों के लिए नीतिगत सिद्धांत का वर्णन है।
- अनुच्छेद 39 A समान न्याय एवं निःशुल्क कानूनी सहायता का प्रावधान करता है।

Result Mitra

शीघ्र कार्रवाई में बाधा के संभावित कारण -

- पुलिस प्रशासन की लापरवाही यथा:- जांच प्रक्रिया देर में शुरू करना, गवाह, सबूत जमा करने में देरी।
- लंबित मामलों की संख्या बहुत ज्यादा होना,
- न्यायाधीशों एवं मामलों के अनुपात,
- न्यायालय की स्वतंत्रता
- न्यायालयों में अवकाश
- संबंधित वकील की अनिच्छा
- अभियुक्त का असहयोगपूर्ण व्यवहार
- अपराध की स्थिति आदि।

उल्लंघन की दशा में -

- चूंकि शीघ्र कार्रवाई का अधिकार अनुच्छेद 21 के तहत एक मूल अधिकार है, अतः पीड़ित व्यक्ति या उसके पक्ष से कोई व्यक्ति अनुच्छेद 32 के तहत सर्वोच्च न्यायालय एवं अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय में बंदी प्रत्यक्षीकरण रिट के तहत उपचार की गुहार लगा सकता है।

अनुच्छेद 32 -

- संसद के पास यह अधिकार है कि वह किसी भी न्यायालय को रिट जारी करने की शक्ति दे सकता है।
- वर्तमान में SC एवं HC को ही यह शक्ति प्राप्त है।
- रिट के 5 प्रकार हैं:-

A) बंदी प्रत्यक्षीकरण

- लैटिन भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ होता है 'को प्रस्तुत किया जाय।'
- यह न्यायालय द्वारा उस व्यक्ति के सन्दर्भ में जारी किया जाता है, जो हिरासत में रखा गया है।
- यह रिट सार्वजनिक प्राधिकरण एवं निजी व्यक्ति दोनों के खिलाफ जारी किया जा सकता है।
- कुछ परिस्थितियों में यह रिट जारी क्यों नहीं किया जा सकता है:-

1) जब हिरासत कानून सम्मत (अनुसार) हो,

Result Mitra

2) जब कार्रवाई न्यायालय या संसद/विधानमंडल के अवमानना करने पर हुई हो।

3) जब हिरासत स्वयं न्यायालय द्वारा हुई हो।

4) जब हिरासत न्यायालय के न्यायक्षेत्र से बाहर हुई हो।

Result Mitra